(IJRSSH) 2026, Vol. No. 16, Issue No. IV, Oct-Dec **e-ISSN: 2249-4642 p-ISSN: 2454-4671**

भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय पर ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव

***अंकित कुमार, **प्रो. (डॉ.) गिरीश चन्द्र पाण्डेय**
*शोधार्थी, इतिहास विभाग
**प्रोफेसर, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर (बिहार)

The Social and Economic Impact of Britich Colonial Policies on the Silk Weaver Community of Bhagalpur

***Ankit Kumar, **Prof. (Dr.) Girish Chandra Pandey**
*Research Scholar, Department of History
**Professor, Postgraduate Department of History
Munger University, Munger (Bihar)

DOI:10.37648/ijrssh.v16i04.003

[1] *Received: 27 August 2026; Accepted: 30 September 2026 ; Published: 11 October 2026*

ABSTRACT

The present research paper aims to undertake a historical analysis of the social and economic transformations that took place in the silk industry of Bhagalpur and its associated weaving community during the colonial period. The silk-weaving tradition of Bhagalpur predates British rule, and tussar silk, traditional handloom techniques, and family-based labour arrangements played a significant role in its development. Following the Battle of Buxar in 1764 and the acquisition of Diwani rights by the East India Company in 1765, the Company's influence over the economic structure of Bihar and Bengal increased. Silk became one of the major commercial interests of the Company, and colonial intervention in production, reeling, quality control, and trade intensified.

The study is primarily based on a historical-analytical methodology and draws upon colonial administrative records, district gazetteers, industrial surveys, census documents, and secondary academic literature. The study reveals that the colonial commercial system increased the market dependence of weavers and strengthened the role of intermediaries, thereby affecting their economic autonomy. Production costs, the availability of raw materials, market demand, and competition from European industries influenced the income and employment of weavers. These developments also affected family-based labour arrangements, the role of women, and traditional occupational identities.

[1] How to cite the article: Kumar A., Pandey G.C; (October, 2026); The Social and Economic Impact of Britich Colonial Policies on the Silk Weaver Community of Bhagalpur; *International Journal of Research in Social Sciences and Humanities*; Vol 16, Issue 4; 27-39, DOI: http://doi.org/10.37648/ijrssh.v16i04.003

However, the study also demonstrates that the silk industry of Bhagalpur did not disappear entirely during the colonial period. Local weavers sustained the industry through traditional skills, distinctive tussar silk, family labour, and technological and market-oriented adaptations. Therefore, the colonial history of the silk industry of Bhagalpur is better understood as a complex process of economic restructuring, social pressures, adaptation, and continuity rather than one of complete destruction.

Keywords: *Bhagalpur Silk Industry; Silk Weaver Community; British Colonial Policies; Tussar Silk; Colonial Economy; Handloom Industry; Weaver Community; Industrial Decline; Craftsmanship.*

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य औपनिवेशिक काल में भागलपुर के रेशम उद्योग तथा उससे जुड़े बुनकर समुदाय में हुए सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों का ऐतिहासिक विश्लेषण करना है। भागलपुर की रेशम बुनाई परंपरा ब्रिटिश शासन से पूर्व की है और तसर रेशम, पारंपरिक हस्तकरघा तकनीक तथा परिवार-आधारित श्रम व्यवस्था ने इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1764 के बक्सर युद्ध और 1765 में ईस्ट इंडिया कंपनी को दीवानी अधिकार प्राप्त होने के बाद बिहार एवं बंगाल की आर्थिक व्यवस्था में कंपनी का प्रभाव बढ़ा। रेशम कंपनी के प्रमुख वाणिज्यिक हितों में शामिल हुआ तथा उत्पादन, रीलिंग, गुणवत्ता नियंत्रण और व्यापार में औपनिवेशिक हस्तक्षेप बढ़ा। अध्ययन मुख्यतः ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है तथा इसमें औपनिवेशिक प्रशासनिक अभिलेखों, जिला गजेटियर, औद्योगिक सर्वेक्षणों, जनगणना संबंधी दस्तावेजों तथा द्वितीयक अकादमिक साहित्य का उपयोग किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक व्यापारिक व्यवस्था ने बुनकरों की बाजार-निर्भरता बढ़ाई और मध्यस्थों की भूमिका को मजबूत किया, जिसके परिणामस्वरूप उनकी आर्थिक स्वायत्तता प्रभावित हुई। उत्पादन लागत, कच्चे माल की उपलब्धता, बाजार की मांग तथा यूरोपीय औद्योगिक प्रतिस्पर्धा ने बुनकरों की आय और रोजगार को प्रभावित किया। इसका प्रभाव परिवार-आधारित श्रम व्यवस्था, महिलाओं की भूमिका और पारंपरिक पेशागत पहचान पर भी पड़ा। हालाँकि, अध्ययन यह भी दर्शाता है कि भागलपुर का रेशम उद्योग औपनिवेशिक काल में पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ। स्थानीय बुनकरों ने पारंपरिक कौशल, विशिष्ट तसर रेशम, पारिवारिक श्रम तथा तकनीकी एवं बाजार-अनुकूलन के माध्यम से उद्योग की निरंतरता बनाए रखी। अतः भागलपुर के रेशम उद्योग का औपनिवेशिक इतिहास पूर्ण विनाश के बजाय आर्थिक पुनर्संरचना, सामाजिक दबाव, अनुकूलन और निरंतरता की जटिल प्रक्रिया के रूप में समझा जाना अधिक उपयुक्त है।

मुख्य शब्द: भागलपुर रेशम उद्योग, रेशम बुनकर समुदाय, ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियाँ, तसर रेशम, औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था, हस्तकरघा उद्योग, बुनकर समुदाय, औद्योगिक अवनयन, शिल्प.

2. प्रस्तावना

भारत की पारंपरिक अर्थव्यवस्था में हस्तशिल्प एवं वस्त्र उद्योगों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। वस्त्र निर्माण केवल दैनिक उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन तक सीमित नहीं था, बल्कि यह स्थानीय अर्थव्यवस्था, श्रम-विभाजन, व्यापारिक नेटवर्क तथा अंतरक्षेत्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जुड़ी व्यापक आर्थिक व्यवस्था का हिस्सा था। विशेष रूप से रेशम अपने उच्च मूल्य और अपेक्षाकृत कम आयतन के कारण प्रारंभिक वैश्विक व्यापार की महत्वपूर्ण वस्तुओं में शामिल था। रेशम उत्पादन एवं प्रसंस्करण में व्यापक श्रम की आवश्यकता होती थी, जिससे उत्पादक समुदायों, व्यापारियों तथा राज्य को आर्थिक लाभ प्राप्त होता था। ब्रिटेन में रेशम-कीट पालन के लिए अनुकूल प्राकृतिक परिस्थितियों की सीमितता के कारण ब्रिटिश रेशम उद्योग कच्चे रेशम की बाहरी आपूर्ति पर निर्भर था, जिसने बंगाल के कच्चे रेशम में ब्रिटिश व्यापारिक शक्तियों की रुचि को बढ़ाया (Hutková, 2019)। पूर्वी भारत में

बंगाल और बिहार इस व्यापक रेशम उत्पादन एवं व्यापार व्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्र थे, जिनमें भागलपुर विशेष रूप से तसर रेशम और रेशमी वस्त्रों की बुनाई के लिए जाना जाता रहा है। भागलपुर की रेशम परंपरा ब्रिटिश शासन के बाद उत्पन्न नहीं हुई थी, बल्कि इसकी जड़ें पूर्व-औपनिवेशिक स्थानीय उत्पादन व्यवस्था, पारंपरिक कारीगरी और क्षेत्रीय व्यापारिक संपर्कों में थीं। फ्रांसिस बुकानन हैमिल्टन के सर्वेक्षणों तथा बाद के औपनिवेशिक प्रशासनिक एवं औद्योगिक दस्तावेजों में भागलपुर की कृषि, उद्योग, व्यापार और स्थानीय उत्पादन गतिविधियों का उल्लेख मिलता है (Buchanan-Hamilton, 1833)। रेशम उद्योग में रेशम-कीट पालन, कोकून उत्पादन, रेशम निकालना, धागा निर्माण, रंगाई, बुनाई, वस्त्र निर्माण और विपणन जैसी अनेक गतिविधियाँ सम्मिलित थीं, जिससे यह स्थानीय अर्थव्यवस्था में बहुस्तरीय रोजगार का आधार बना। परिवार इस उत्पादन व्यवस्था की महत्वपूर्ण इकाई था और पुरुषों के साथ महिलाओं तथा परिवार के अन्य सदस्यों की भी विभिन्न उत्पादन प्रक्रियाओं में भागीदारी रहती थी। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में 1757 के प्लासी युद्ध और 1764 के बक्सर युद्ध के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी की राजनीतिक शक्ति बंगाल एवं बिहार में मजबूत हुई तथा 1765 में दीवानी अधिकार प्राप्त करने के बाद कंपनी का राजस्व, प्रशासनिक एवं व्यापारिक प्रभाव और विस्तृत हुआ। Hutková (2019) के अनुसार, कंपनी की वित्तीय आवश्यकताओं और ब्रिटिश बाजार के लिए कच्चे रेशम की मांग ने बंगाल के रेशम में उसकी रुचि को बढ़ाया। कंपनी ने रेशम को केवल व्यापारिक वस्तु के रूप में नहीं देखा, बल्कि उत्पादन, रीलिंग, प्रसंस्करण और गुणवत्ता नियंत्रण में भी हस्तक्षेप किया तथा यूरोपीय रेशम-रीलिंग तकनीकों को लागू करने का प्रयास किया। इस तकनीकी हस्तक्षेप का उद्देश्य रेशम की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता को ब्रिटिश बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना था, किंतु स्थानीय उत्पादकों की प्रतिक्रिया उनकी आर्थिक परिस्थितियों और हितों से प्रभावित हुई (Hutková, 2019)। परिणामस्वरूप भागलपुर सहित रेशम उत्पादक क्षेत्रों की स्थानीय उत्पादन व्यवस्था व्यापक औपनिवेशिक व्यापारिक नेटवर्क से जुड़ गई; इससे बाजार का विस्तार हुआ, परंतु कंपनी, व्यापारी, एजेंट और मध्यस्थों की भूमिका बढ़ने से उत्पादकों की बाजार तक पहुँच, मूल्य-निर्धारण और आर्थिक स्वायत्तता भी प्रभावित हुई। सीमित पूंजी वाले बुनकरों के लिए उत्पादन एवं विपणन में मध्यस्थों पर निर्भरता बढ़ी, जिसके कारण बाजार का विस्तार स्वतः आर्थिक समृद्धि में परिवर्तित नहीं हुआ।

इसी संदर्भ में भारतीय पारंपरिक उद्योगों के औद्योगिक अवनयन की बहस भागलपुर के रेशम उद्योग को समझने के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है। लंबे समय तक यह धारणा प्रभावी रही कि ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों तथा मशीन-निर्मित ब्रिटिश वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा ने भारतीय हस्तशिल्प उद्योगों को व्यापक रूप से कमजोर किया, किंतु बंगाल के रेशम उद्योग पर उपलब्ध शोध इस प्रक्रिया को अधिक जटिल और क्रमिक रूप में प्रस्तुत करता है। Ray (2005) ने बंगाल के रेशम उद्योग के औपनिवेशिक इतिहास का पुनर्मूल्यांकन करते हुए marketability, technology, organisation, employment opportunities और capital structure जैसे विभिन्न कारकों का विश्लेषण किया और यह संकेत दिया कि उद्योग में स्पष्ट गिरावट उन्नीसवीं शताब्दी के बाद के चरणों में अधिक दिखाई देती है। इसलिए भागलपुर के रेशम उद्योग को केवल "ब्रिटिश शासन के कारण नष्ट हुआ उद्योग" मानना ऐतिहासिक रूप से पर्याप्त नहीं होगा; दूसरी ओर, औपनिवेशिक व्यापारिक नीतियों और आर्थिक दबावों की उपेक्षा करना भी बुनकर समुदाय में हुए वास्तविक परिवर्तनों को समझने में बाधक होगा। उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोपीय औद्योगिक उत्पादन के विस्तार और मशीनीकरण ने भारतीय हस्तकरघा उद्योगों पर प्रतिस्पर्धात्मक दबाव बढ़ाया, लेकिन रेशम की उच्च गुणवत्ता, विशिष्ट डिजाइन और विशेष बाजारों में हस्तनिर्मित वस्त्रों की मांग के कारण रेशम उद्योग की स्थिति सूती वस्त्र उद्योग से पूरी तरह समान नहीं थी (Hutková, 2019)। औपनिवेशिक आर्थिक परिवर्तन का प्रभाव बुनकरों की आय, रोजगार, परिवार की जीविका और श्रम-विभाजन तक विस्तृत हुआ। महिलाओं द्वारा किए जाने वाले कई उत्पादन-संबंधी कार्य औपचारिक औद्योगिक आँकड़ों में स्वतंत्र श्रम के रूप में दर्ज नहीं होते थे, फिर भी वे रेशम उत्पादन की वास्तविक प्रक्रिया के लिए आवश्यक थे। इस प्रकार भागलपुर के रेशम उद्योग का अध्ययन केवल पुरुष बुनकरों की आर्थिक स्थिति के रूप में नहीं, बल्कि संपूर्ण कारीगर परिवार की सामाजिक-आर्थिक संरचना के अध्ययन के रूप में किया जाना आवश्यक है। साथ ही, स्थानीय बुनकरों को केवल औपनिवेशिक नीतियों का निष्क्रिय शिकार

मानना भी उचित नहीं होगा। उनके पास पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकसित तकनीकी कौशल, डिजाइन ज्ञान और उत्पादन अनुभव था, जिसने उन्हें बदलते बाजार और तकनीकी परिस्थितियों के अनुकूलन में सहायता प्रदान की। अतः भागलपुर के रेशम उद्योग का औपनिवेशिक इतिहास औपनिवेशिक व्यापारिक नियंत्रण, बाजार-निर्भरता, तकनीकी प्रतिस्पर्धा और आर्थिक दबाव के साथ-साथ स्थानीय कौशल, पारिवारिक श्रम, बाजार-अनुकूलन और पेशागत निरंतरता की संयुक्त प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए। इसी ऐतिहासिक संदर्भ में प्रस्तुत शोध-पत्र 1764 से 1947 के मध्य भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय पर ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों के सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण करता है और विशेष रूप से बुनकरों की आय, रोजगार, उत्पादन संबंध, बाजार तक पहुँच, आर्थिक स्वायत्तता, पारंपरिक पेशागत पहचान तथा सामाजिक स्थिति में आए परिवर्तनों के साथ-साथ बदलती तकनीकी एवं बाजार परिस्थितियों के प्रति उनके अनुकूलन का अध्ययन करता है।

3. अध्ययन के उद्देश्य एवं शोध-पद्धति

3.1 अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य औपनिवेशिक शासन के दौरान भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय में हुए सामाजिक, आर्थिक एवं पेशागत परिवर्तनों का ऐतिहासिक विश्लेषण करना है। भागलपुर का रेशम उद्योग केवल एक स्थानीय कुटीर उद्योग नहीं था, बल्कि उत्पादन, श्रम, पारिवारिक आजीविका, व्यापार, बाजार तथा पारंपरिक शिल्प-कौशल से जुड़ी व्यापक आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा था। इसी व्यापक संदर्भ को ध्यान में रखते हुए अध्ययन के निम्नलिखित चार प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं—

1. भागलपुर के रेशम उद्योग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं औपनिवेशिक काल में हुए परिवर्तनों का अध्ययन करना, जिसमें ब्रिटिश शासन से पूर्व उद्योग की प्रकृति, उत्पादन प्रणाली, पारंपरिक शिल्प-कौशल तथा स्थानीय एवं क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में इसकी भूमिका के साथ-साथ औपनिवेशिक शासन के दौरान इसके पुनर्गठन का विश्लेषण शामिल है।
2. ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यापारिक एवं आर्थिक नीतियों के भागलपुर के रेशम उद्योग और बुनकरों पर प्रभाव का विश्लेषण करना, विशेष रूप से ईस्ट इंडिया कंपनी की रेशम संबंधी गतिविधियों, उत्पादन एवं विपणन व्यवस्था, औपनिवेशिक बाजार संरचना, मध्यस्थों की भूमिका, तकनीकी हस्तक्षेप तथा ब्रिटिश औद्योगिक हितों के संदर्भ में।
3. रेशम बुनकर समुदाय की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में आए परिवर्तनों का अध्ययन करना, जिसमें बुनकरों की आय, रोजगार, आर्थिक स्वायत्तता, कच्चे माल एवं बाजार तक पहुँच, मूल्य-निर्धारण, पारिवारिक श्रम, महिलाओं की भूमिका, पीढ़ीगत पेशागत हस्तांतरण, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा वैकल्पिक आजीविका की ओर बढ़ती निर्भरता को विशेष रूप से शामिल किया गया है।
4. औपनिवेशिक दबावों के बीच बुनकर समुदाय की अनुकूलन एवं अस्तित्व-रणनीतियों तथा रेशम उद्योग की निरंतरता का मूल्यांकन करना, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि बदलती तकनीकी, बाजार एवं आर्थिक परिस्थितियों के बीच स्थानीय बुनकरों ने पारंपरिक कौशल, पारिवारिक श्रम, उत्पाद विविधीकरण, तकनीकी अनुकूलन और नए बाजार संबंधों के माध्यम से अपनी आजीविका एवं शिल्प-परंपरा को किस प्रकार बनाए रखा तथा उद्योग में आए परिवर्तन को पूर्ण विनाश, क्रमिक अवनयन या आर्थिक पुनर्संरचना एवं निरंतरता में से किस रूप में अधिक उपयुक्त ढंग से समझा जा सकता है।

(IJRSSH) 2026, Vol. No. 16, Issue No. IV, Oct-Dec e-ISSN: 2249-4642 p-ISSN: 2454-4671

3.2 शोध-पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन में गुणात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए औपनिवेशिक काल के उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोतों का आलोचनात्मक एवं व्याख्यात्मक अध्ययन किया गया है। शोध का उद्देश्य केवल ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन करना नहीं है, बल्कि ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों, रेशम उद्योग की उत्पादन संरचना तथा बुनकर समुदाय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के बीच स्थापित संबंधों को समझना है। अध्ययन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में औपनिवेशिक प्रशासनिक रिपोर्टें, जिला गजेटियर, जनगणना रिपोर्टें, औद्योगिक एवं आर्थिक सर्वेक्षण, व्यापारिक अभिलेख तथा ईस्ट इंडिया कंपनी से संबंधित दस्तावेज शामिल किए गए हैं। फ्रांसिस बुकानन हैमिल्टन के प्रारंभिक उन्नीसवीं शताब्दी के विवरण इस अध्ययन के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनमें भागलपुर सहित बिहार के विभिन्न क्षेत्रों की आर्थिक गतिविधियों और स्थानीय उद्योगों का विवरण मिलता है (Buchanan-Hamilton, 1833)। इसी प्रकार औपनिवेशिक काल की औद्योगिक रिपोर्टें रेशम उत्पादन, बुनाई, करघों, कारीगरों और बाजार व्यवस्था से संबंधित ऐतिहासिक जानकारी उपलब्ध कराती हैं।

द्वितीयक स्रोतों में इतिहासकारों एवं अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखित पुस्तकों, शोध-पत्रों, अकादमिक जर्नलों तथा औपनिवेशिक भारतीय अर्थव्यवस्था और रेशम उद्योग पर किए गए आधुनिक अध्ययनों का उपयोग किया गया है। विशेष रूप से Hutková (2019) का अध्ययन ईस्ट इंडिया कंपनी के बंगाल रेशम उद्यम, तकनीकी हस्तक्षेप, उत्पादन व्यवस्था और व्यापारिक हितों को समझने में उपयोगी है। इसी प्रकार Ray (2005) द्वारा बंगाल के रेशम उद्योग में औद्योगिक अवनयन की बहस का पुनर्मूल्यांकन इस अध्ययन के सैद्धांतिक एवं विश्लेषणात्मक आधार को मजबूत करता है।

अध्ययन में उपलब्ध स्रोतों की स्रोत-समीक्षा भी की गई है। औपनिवेशिक प्रशासनिक स्रोतों में प्रस्तुत आंकड़ों और विवरणों को सीधे तथ्य के रूप में स्वीकार करने के बजाय उनके प्रशासनिक एवं औपनिवेशिक संदर्भ को ध्यान में रखते हुए उनका मूल्यांकन किया गया है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बुनकरों की स्थिति का अध्ययन केवल औपनिवेशिक अधिकारियों के दृष्टिकोण से न होकर स्थानीय उत्पादन व्यवस्था और कारीगर समुदाय की भूमिका को भी ध्यान में रखकर किया जाए।

अध्ययन में प्राप्त सामग्री का कालानुक्रमिक, तुलनात्मक एवं व्याख्यात्मक विश्लेषण किया गया है। कालानुक्रमिक विश्लेषण के माध्यम से 1764 के बाद कंपनी के राजनीतिक एवं आर्थिक प्रभाव से लेकर 1947 में औपनिवेशिक शासन की समाप्ति तक हुए परिवर्तनों को समझने का प्रयास किया गया है। तुलनात्मक विश्लेषण के अंतर्गत औपनिवेशिक शासन के प्रारंभिक और बाद के चरणों में रेशम उद्योग की स्थिति, उत्पादन व्यवस्था तथा बुनकर समुदाय की आर्थिक स्थिति में आए परिवर्तनों की तुलना की गई है। व्याख्यात्मक विश्लेषण के माध्यम से इन परिवर्तनों के पीछे कार्यरत व्यापारिक, तकनीकी, आर्थिक एवं सामाजिक कारकों को समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन का काल-क्षेत्र 1764 से 1947 निर्धारित किया गया है। वर्ष 1764 को इसलिए प्रारंभिक बिंदु माना गया है क्योंकि बक्सर युद्ध के बाद बिहार एवं बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी की राजनीतिक शक्ति निर्णायक रूप से मजबूत हुई और 1765 में दीवानी अधिकार प्राप्त होने के बाद कंपनी के आर्थिक एवं प्रशासनिक हस्तक्षेप का विस्तार हुआ। दूसरी ओर, 1947 को अध्ययन की अंतिम सीमा निर्धारित किया गया है क्योंकि इसी वर्ष भारत ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र हुआ और औपनिवेशिक आर्थिक व्यवस्था के स्थान पर स्वतंत्र भारत की नई आर्थिक एवं औद्योगिक नीतियों का प्रारंभ हुआ।

4. भागलपुर के रेशम उद्योग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भागलपुर का रेशम उद्योग पूर्वी भारत की पारंपरिक हस्तशिल्प एवं वस्त्र अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। गंगा नदी के दक्षिणी तट पर स्थित होने तथा क्षेत्रीय व्यापारिक मार्गों से जुड़े होने के कारण भागलपुर में उत्पादित रेशमी वस्त्रों को स्थानीय, क्षेत्रीय और दूरस्थ बाजारों तक पहुँचने की सुविधा प्राप्त थी। भागलपुर की रेशम परंपरा ब्रिटिश शासन के बाद विकसित नहीं हुई, बल्कि इसकी जड़ें पूर्व-औपनिवेशिक स्थानीय कारीगरी, उत्पादन कौशल और व्यापारिक संपर्कों में थीं। विशेष रूप से तसर रेशम ने इस क्षेत्र की औद्योगिक एवं सांस्कृतिक पहचान को विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया; इसकी प्राकृतिक चमक, बनावट और मजबूती के कारण भागलपुर तसर-आधारित रेशमी वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध हुआ (District Administration, Bhagalpur, n.d.; Ministry of Textiles, Government of India, 2014)। रेशम उद्योग केवल बुनाई तक सीमित नहीं था, बल्कि कोकून उत्पादन, रेशम निकालना, धागा तैयार करना, रंगाई, बुनाई, finishing, परिवहन और विपणन जैसी अनेक गतिविधियाँ इससे जुड़ी थीं, जिससे यह स्थानीय अर्थव्यवस्था में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार का महत्वपूर्ण आधार बना (Mishra, 1994)। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में भागलपुर के रेशम उद्योग की व्यापकता का अनुमान ऐतिहासिक स्रोतों से लगाया जा सकता है। फ्रांसिस बुकानन हैमिल्टन के सर्वेक्षण के आधार पर लगभग 1810 के आसपास भागलपुर में लगभग 3,275 करघों के कार्यरत होने का उल्लेख मिलता है, जो इस बात का संकेत है कि बुनाई स्थानीय अर्थव्यवस्था में पर्याप्त महत्व रखती थी। उस समय उत्पादन मुख्यतः हस्तकरघा-आधारित और परिवार-केंद्रित था तथा बुनाई का कौशल पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता था। परिवार के विभिन्न सदस्य धागे की तैयारी, रंगाई, बुनाई और अन्य सहायक कार्यों में योगदान देते थे, जिससे करघा केवल उत्पादन का साधन न रहकर परिवार की आजीविका, पेशागत पहचान और सामाजिक स्थिति से जुड़ी आर्थिक इकाई बन गया। इस प्रकार रेशम उद्योग का स्थानीय महत्व केवल तैयार वस्त्रों के उत्पादन में नहीं, बल्कि उससे जुड़े व्यापक सामाजिक एवं आर्थिक संबंधों में भी निहित था।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य के बाद भागलपुर के रेशम उद्योग को ईस्ट इंडिया कंपनी के राजनीतिक एवं आर्थिक विस्तार के संदर्भ में समझना आवश्यक है। 1764 के बक्सर युद्ध और 1765 में दीवानी अधिकार प्राप्त करने के बाद कंपनी का बिहार एवं बंगाल की राजस्व तथा आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव बढ़ा और बंगाल का कच्चा रेशम उसके प्रमुख व्यापारिक हितों में शामिल हो गया। कंपनी ने रेशम की खरीद और व्यापार के साथ-साथ उत्पादन, प्रसंस्करण, गुणवत्ता नियंत्रण तथा reeling तकनीक में भी हस्तक्षेप किया और ब्रिटिश बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पादन को व्यवस्थित करने के लिए Piedmontese reeling technology जैसी यूरोपीय तकनीकों को लागू करने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप भागलपुर का स्थानीय रेशम उद्योग व्यापक क्षेत्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक नेटवर्क से जुड़ता गया; इससे बाजार का विस्तार और नई मांग के अवसर तो उत्पन्न हुए, लेकिन उत्पादन एवं विपणन पर बाहरी व्यापारिक शक्तियों तथा मध्यस्थों का प्रभाव भी बढ़ा। बुनकरों की आर्थिक स्थिति अब केवल उनके कौशल और श्रम पर निर्भर नहीं रही, बल्कि कच्चे माल की उपलब्धता, कीमत, बाजार की मांग और व्यापारिक संबंधों से भी प्रभावित होने लगी। उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोपीय मशीन-आधारित उत्पादन के विस्तार ने भारतीय हस्तकरघा उद्योगों के सामने अतिरिक्त प्रतिस्पर्धा उत्पन्न की, किंतु बंगाल के रेशम उद्योग पर उपलब्ध शोध यह दर्शाता है कि इसका परिवर्तन तत्काल और पूर्ण औद्योगिक विनाश के रूप में नहीं हुआ। Ray (2005) के अनुसार बंगाल के रेशम उद्योग का अवनयन क्रमिक और बहु-कारकीय था, जिसमें बाजार, तकनीकी परिवर्तन, उत्पादन संगठन, रोजगार और पूंजी जैसे कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस दृष्टि से भागलपुर के रेशम उद्योग का औपनिवेशिक इतिहास "ब्रिटिश शासन से पहले समृद्ध और उसके बाद पूर्णतः नष्ट" होने की सरल प्रक्रिया के बजाय व्यापारिक विस्तार, तकनीकी परिवर्तन, बाजार प्रतिस्पर्धा, आर्थिक दबाव और स्थानीय अनुकूलन की जटिल प्रक्रिया के रूप में समझा जाना अधिक उचित है। प्रारंभिक उन्नीसवीं शताब्दी में बड़ी संख्या में करघों की उपस्थिति, तसर रेशम की विशिष्टता, परिवार-आधारित उत्पादन और क्षेत्रीय व्यापारिक संपर्क यह दर्शाते हैं कि रेशम उद्योग स्थानीय अर्थव्यवस्था

की महत्वपूर्ण आधारशिला था, जबकि औपनिवेशिक शासन के विस्तार ने इसे नए बाजार अवसरों के साथ-साथ नई आर्थिक चुनौतियों से भी जोड़ा।

5. ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियाँ और रेशम बुनकर समुदाय

अठारहवीं शताब्दी के मध्य के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी के राजनीतिक प्रभुत्व के विस्तार ने बंगाल और बिहार की पारंपरिक आर्थिक व्यवस्था को व्यापक औपनिवेशिक व्यापारिक संरचना से जोड़ दिया। 1765 में दीवानी अधिकार प्राप्त करने के बाद कंपनी की राजस्व एवं प्रशासनिक शक्ति में वृद्धि हुई और उसके व्यापारिक हितों का भी विस्तार हुआ। रेशम कंपनी की प्रमुख वाणिज्यिक वस्तुओं में शामिल था, क्योंकि बंगाल का कच्चा रेशम ब्रिटिश एवं यूरोपीय बाजारों के लिए महत्वपूर्ण था और ब्रिटेन में घरेलू उत्पादन सीमित होने के कारण बाहरी आपूर्ति पर निर्भरता बनी हुई थी। कंपनी का हस्तक्षेप केवल रेशम की खरीद और निर्यात तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उत्पादन, रीलिंग, प्रसंस्करण, गुणवत्ता नियंत्रण तथा व्यापार तक विस्तृत हुआ। बंगाल में Piedmontese silk-reeling technology को लागू करने के प्रयास इसी हस्तक्षेप के महत्वपूर्ण उदाहरण थे। इसका उद्देश्य रेशम की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता को यूरोपीय बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना था, हालांकि स्थानीय reelers ने कुछ तकनीकी परिवर्तनों का विरोध भी किया, क्योंकि उन्हें उत्पादन की गति और मात्रा पर संभावित प्रतिकूल प्रभाव की आशंका थी। इससे स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक तकनीकी हस्तक्षेप केवल आधुनिकीकरण की प्रक्रिया नहीं था, बल्कि उसके साथ आर्थिक नियंत्रण और उत्पादन संबंधों का पुनर्गठन भी जुड़ा था। कंपनी की बढ़ती भूमिका ने स्थानीय उत्पादकों और व्यापारियों के पारंपरिक संबंधों को प्रभावित किया तथा रेशम उत्पादन को व्यापक क्षेत्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक नेटवर्क से जोड़ा। परिणामस्वरूप बाजार का विस्तार हुआ, किंतु कंपनी, एजेंटों और मध्यस्थों की भूमिका बढ़ने से उत्पादक और अंतिम बाजार के बीच आर्थिक दूरी भी बढ़ी। भागलपुर में रेशम बुनाई मुख्यतः परिवार-आधारित एवं श्रम-प्रधान उत्पादन प्रणाली पर आधारित थी, इसलिए सीमित पूंजी वाले बुनकरों को कच्चे माल, विपणन और मूल्य-निर्धारण के लिए व्यापारियों पर निर्भर रहना पड़ता था। इस स्थिति में बुनकर की आर्थिक स्थिति केवल उसके श्रम और कौशल से नहीं, बल्कि कच्चे माल की कीमत, तैयार वस्त्र की मांग, व्यापारी द्वारा निर्धारित मूल्य और व्यापक बाजार परिस्थितियों से भी प्रभावित होने लगी। इस प्रकार औपनिवेशिक व्यापारिक व्यवस्था ने बुनकरों को व्यापक बाजारों से जोड़ने के साथ उनकी आर्थिक स्वायत्तता पर भी दबाव डाला।

उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश आर्थिक नीति में mercantilism से laissez-faire की ओर परिवर्तन, यूरोपीय तकनीकी प्रगति और वैश्विक रेशम बाजार में बढ़ती प्रतिस्पर्धा ने बंगाल के रेशम उद्योग के सामने नई चुनौतियाँ उत्पन्न कीं। Hutková (2019) के अनुसार, बंगाल के कच्चे रेशम की ब्रिटेन के कुल कच्चे रेशम आयात में हिस्सेदारी 1790 के दशक से 1810 के दशक के लगभग 40 प्रतिशत से घटकर 1860 के दशक में लगभग 13 प्रतिशत रह गई, जो अंतरराष्ट्रीय बाजार में इसकी बदलती प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति का संकेत है। हालांकि, इस परिवर्तन को भागलपुर के बुनकरों के पूर्ण आर्थिक विनाश के रूप में देखना उचित नहीं है। Ray (2005) ने बंगाल के रेशम उद्योग में औद्योगिक अवनयन की पारंपरिक व्याख्या का पुनर्मूल्यांकन करते हुए स्पष्ट किया कि उद्योग का परिवर्तन क्रमिक एवं बहु-कारकीय था, जिसमें बाजार की मांग, तकनीकी परिवर्तन, उत्पादन संगठन, रोजगार और पूंजी संरचना जैसे कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इसी प्रकार भागलपुर के संदर्भ में औपनिवेशिक नीतियों के प्रभाव को केवल ब्रिटिश मशीन-निर्मित वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा तक सीमित नहीं किया जा सकता; तकनीकी परिवर्तन, उत्पादन लागत, अंतरराष्ट्रीय बाजार, पूंजी की उपलब्धता और स्थानीय बुनकरों की प्रतिक्रिया भी महत्वपूर्ण थे। बदलती परिस्थितियों के बीच बुनकरों ने पारंपरिक तकनीक, डिजाइन और कौशल को बनाए रखते हुए नए उपकरणों तथा उत्पादन विधियों को अपनाने का प्रयास किया। इससे पता चलता है कि वे औपनिवेशिक नीतियों के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि परिस्थितियों के अनुरूप निर्णय लेने वाले सक्रिय आर्थिक समूह थे। आर्थिक दबावों का प्रभाव पारिवारिक श्रम, महिलाओं की भूमिका

और पीढ़ीगत पेशागत निरंतरता पर भी पड़ा, क्योंकि आय में अस्थिरता ने परिवारों को वैकल्पिक रोजगारों की ओर देखने के लिए प्रेरित किया। फिर भी, उपलब्ध ऐतिहासिक साहित्य के आधार पर अधिक उपयुक्त निष्कर्ष यह है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों ने भागलपुर के रेशम उद्योग को समाप्त करने के बजाय उसकी पारंपरिक उत्पादन, बाजार और सामाजिक संरचना को पुनर्गठित किया। अतः इसके प्रभाव को उत्पादन एवं तकनीकी व्यवस्था में परिवर्तन, व्यापार एवं बाजार संरचना में पुनर्संरचना तथा बुनकर परिवारों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में परिवर्तन इन तीन परस्पर संबंधित स्तरों पर समझना अधिक उचित है (Hutková, 2019।

6. बुनकर समुदाय पर सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव

ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों का प्रभाव भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय पर केवल उत्पादन और व्यापार तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसने बुनकर परिवारों की आय, रोजगार, श्रम-विभाजन, पेशागत पहचान तथा सामाजिक स्थिति को भी प्रभावित किया। भागलपुर में रेशम बुनाई एक श्रम-प्रधान और परिवार-आधारित आर्थिक गतिविधि थी, जिसमें धागे की तैयारी, बुनाई, रंगाई, वस्त्र निर्माण और finishing जैसी विभिन्न प्रक्रियाओं में परिवार के अनेक सदस्य योगदान देते थे। आधुनिक अध्ययनों में भी भागलपुर के रेशम उद्योग को yarn production, fabric weaving तथा fabric finishing जैसी परस्पर संबद्ध गतिविधियों वाला उद्योग बताया गया है (Mishra, 1994)। औपनिवेशिक व्यापारिक व्यवस्था के विस्तार के साथ रेशम उत्पादन व्यापक क्षेत्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जुड़ा, जिससे मांग और व्यापार के नए अवसर तो उत्पन्न हुए, किंतु बाजार विस्तार का लाभ बुनकरों को समान रूप से प्राप्त नहीं हुआ। उत्पादन लागत, कच्चे रेशम की उपलब्धता, धागे की कीमत, तैयार वस्त्रों की मांग तथा व्यापारी एवं मध्यस्थों की भूमिका ने उनकी वास्तविक आय और आर्थिक स्वायत्तता को प्रभावित किया। सीमित पूंजी वाले बुनकरों के लिए व्यापारी और मध्यस्थ कच्चे माल तथा बाजार तक पहुँच के महत्वपूर्ण माध्यम बन गए, जिससे उत्पादक और अंतिम बाजार के बीच आर्थिक दूरी बढ़ी। चूँकि उत्पादन परिवार-केंद्रित था, इसलिए बुनकर की आय में परिवर्तन का प्रभाव पूरे परिवार की आजीविका पर पड़ता था। महिलाओं का श्रम भी इस व्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा था; पारंपरिक thigh reeling जैसी गतिविधियों में उनकी भागीदारी रेशम उत्पादन की वास्तविक सामाजिक-आर्थिक संरचना को स्पष्ट करती है (Chandra Silk, n.d.)। इस प्रकार महिलाओं का योगदान केवल घरेलू सहायता तक सीमित नहीं था, बल्कि वह उत्पादन प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा था। आर्थिक अस्थिरता की स्थिति में परिवारों को कृषि, मजदूरी, छोटे व्यापार अथवा अन्य कुटीर गतिविधियों जैसे वैकल्पिक आय-स्रोतों पर निर्भर होना पड़ सकता था। हालांकि, औपनिवेशिक काल के प्रत्येक चरण में सभी बुनकरों की आय में समान गिरावट हुई थी, ऐसा निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा, क्योंकि Ray (2005) के अनुसार बंगाल के रेशम उद्योग में परिवर्तन क्रमिक और बहु-कारकीय था तथा बाजार, तकनीक, संगठन, रोजगार और पूंजी जैसे कारकों ने इसकी दिशा निर्धारित की। इसी प्रकार औपनिवेशिक आर्थिक परिवर्तन ने पारंपरिक पेशागत संरचना को भी प्रभावित किया। रेशम बुनाई का कौशल परिवार और समुदाय के भीतर पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता था तथा यह आर्थिक गतिविधि के साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान का भी आधार था। बाजार की अनिश्चितता और आय में परिवर्तन ने इस पेशागत निरंतरता के सामने नई चुनौतियाँ उत्पन्न कीं और नई पीढ़ी के लिए वैकल्पिक रोजगार की संभावनाएँ बढ़ीं। आर्थिक निर्भरता की स्थिति में स्वतंत्र कारीगर की भूमिका व्यापारी या master-weaver के लिए कार्य करने वाले उत्पादक में परिवर्तित हो सकती थी, जिससे उसके श्रम और उत्पाद के मूल्य पर नियंत्रण प्रभावित होता था।

इसके बावजूद, भागलपुर के बुनकरों को केवल औपनिवेशिक नीतियों का निष्क्रिय शिकार मानना उचित नहीं होगा। स्थानीय कारीगरों के पास रेशम की गुणवत्ता, धागे की तैयारी, रंगाई, बुनाई, डिजाइन तथा करघे के संचालन से संबंधित पीढ़ीगत तकनीकी ज्ञान था, जिसने उन्हें बदलती आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूलन में सहायता प्रदान की। बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा European reeling technology को अपनाने के प्रयास इस बात को दर्शाते हैं कि

औपनिवेशिक काल में रेशम उद्योग तकनीकी परिवर्तन और स्थानीय प्रतिक्रिया के बीच निरंतर अंतःक्रिया से गुजर रहा था (Hutková, 2019)। भागलपुर के बुनकरों ने भी पारंपरिक तकनीकों और नए उपकरणों के बीच व्यावहारिक संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया होगा। आर्थिक दबावों के बीच परिवार-आधारित श्रम का विस्तार, उत्पादन में परिवार के अधिक सदस्यों की भागीदारी तथा बाजार की मांग के अनुसार डिजाइन, गुणवत्ता और वस्त्रों में परिवर्तन जैसी प्रक्रियाएँ संभावित अनुकूलन रणनीतियों के रूप में देखी जा सकती हैं। रेशम बुनाई केवल बाजार-आधारित गतिविधि नहीं थी, बल्कि स्थानीय समुदाय की सांस्कृतिक पूंजी भी थी; पीढ़ियों से अर्जित तकनीकी ज्ञान, डिजाइन संबंधी समझ और उत्पादन अनुभव ने बुनकरों को अपनी पेशागत पहचान बनाए रखने में सहायता दी। वर्तमान में भागलपुर के handloom clusters में पारंपरिक pit looms, frame looms और विभिन्न प्रकार के silk fabrics की बुनाई की निरंतरता इस दीर्घकालिक कारीगर परंपरा को समझने में सहायक है। बिहार सरकार के handloom documentation में भागलपुर के Champanagar cluster में लगभग 500 करघों तथा विभिन्न प्रकार के silk fabrics के उत्पादन का उल्लेख मिलता है, जो क्षेत्र की तकनीकी एवं पेशागत निरंतरता का संकेत देता है (Government of Bihar, n.d.)। सामाजिक स्तर पर भी आर्थिक परिवर्तन का प्रभाव पेशागत प्रतिष्ठा, पारिवारिक श्रम-विभाजन और सामुदायिक पहचान पर पड़ा, किंतु इसे सभी बुनकरों के लिए समान सामाजिक पतन के रूप में देखना उचित नहीं है, क्योंकि परिवारों की पूंजी, बाजार तक पहुँच, उत्पादन क्षमता और व्यापारिक संबंधों में पर्याप्त भिन्नता रही होगी। अतः भागलपुर के बुनकर समुदाय की स्थिति को आर्थिक दबाव और सक्रिय अनुकूलन दोनों के संदर्भ में समझना आवश्यक है।

समग्र रूप से, भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय पर ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों का प्रभाव एक बहुआयामी सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया था, जिसमें आर्थिक पुनर्संरचना, बाजार-निर्भरता, सामाजिक परिवर्तन, तकनीकी अनुकूलन और पेशागत निरंतरता एक-दूसरे से जुड़े हुए थे। आर्थिक स्तर पर बाजार संबंधों का विस्तार, मध्यस्थों की बढ़ती भूमिका, उत्पादन लागत, कच्चे माल की उपलब्धता तथा यूरोपीय औद्योगिक प्रतिस्पर्धा ने बुनकरों की आर्थिक स्वायत्तता को प्रभावित किया, जबकि सामाजिक स्तर पर पारंपरिक पेशागत पहचान, पारिवारिक श्रम, महिलाओं की भूमिका और नई पीढ़ी के रोजगार विकल्पों में परिवर्तन की स्थितियाँ उत्पन्न हुईं। फिर भी, इन प्रभावों को केवल "पतन" के रूप में देखना ऐतिहासिक रूप से उचित नहीं होगा। Ray (2005) ने बंगाल के रेशम उद्योग में औद्योगिक अवनयन को क्रमिक और बहु-कारकीय प्रक्रिया के रूप में समझाया है, जबकि Hutková (2019) का अध्ययन कंपनी के तकनीकी हस्तक्षेप, बाजार विस्तार और स्थानीय उत्पादकों की प्रतिक्रिया के बीच जटिल संबंध को सामने लाता है। इसलिए भागलपुर के रेशम उद्योग में हुए परिवर्तन को केवल ब्रिटिश नीतियों या मशीन-निर्मित वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा से नहीं समझा जा सकता; इसके साथ स्थानीय उत्पादन क्षमता, तकनीकी कौशल, पूंजी, बाजार की मांग और बुनकरों की अनुकूलन क्षमता को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। विशेष रूप से तसर रेशम की विशिष्टता, पारंपरिक बुनाई-कौशल और परिवार-आधारित उत्पादन व्यवस्था ने उद्योग की निरंतरता में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस प्रकार भागलपुर के बुनकर समुदाय का औपनिवेशिक इतिहास आर्थिक दबाव, सामाजिक परिवर्तन, अनुकूलन और निरंतरता का इतिहास है, जिसमें औपनिवेशिक व्यवस्था ने पारंपरिक उत्पादन एवं व्यापारिक संरचना को पुनर्गठित अवश्य किया, किंतु स्थानीय कौशल और सामुदायिक उत्पादन परंपरा ने रेशम बुनाई को पूर्णतः समाप्त नहीं होने दिया।

7. अनुकूलन, निरंतरता एवं चर्चा

भागलपुर के रेशम उद्योग का औपनिवेशिक इतिहास केवल आर्थिक पतन या औद्योगिक अवनयन की एकरेखीय कहानी नहीं है, बल्कि दबाव, पुनर्संरचना, अनुकूलन और निरंतरता की जटिल प्रक्रिया है। ब्रिटिश व्यापारिक हितों, बदलती बाजार-व्यवस्था, यूरोपीय औद्योगिक प्रतिस्पर्धा तथा तकनीकी परिवर्तन ने पारंपरिक रेशम उत्पादन पर दबाव

डाला, किंतु स्थानीय बुनकरों ने अपने पारंपरिक कौशल, उत्पादन अनुभव और बदलती बाजार आवश्यकताओं के आधार पर अपनी आजीविका को बनाए रखने का प्रयास किया। औपनिवेशिक शासन के प्रारंभिक चरण में ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल के रेशम उत्पादन को अपने व्यापारिक हितों के अनुरूप व्यवस्थित करने के लिए खरीद, रीलिंग, गुणवत्ता नियंत्रण और उत्पादन तकनीक में हस्तक्षेप किया। यूरोपीय रेशम-रीलिंग तकनीक, विशेष रूप से Piedmontese reeling technology, को लागू करने के प्रयास इस हस्तक्षेप के उदाहरण थे। हालांकि इन तकनीकी परिवर्तनों का उद्देश्य रेशम की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता बढ़ाना था, स्थानीय उत्पादकों की प्रतिक्रिया उनकी आर्थिक परिस्थितियों और उत्पादन संबंधी हितों से प्रभावित हुई। इसी प्रक्रिया में भागलपुर का रेशम उद्योग व्यापक क्षेत्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जुड़ा, जिससे नए बाजार अवसर तो उत्पन्न हुए, लेकिन मध्यस्थों और व्यापारिक संस्थाओं की बढ़ती भूमिका ने बुनकरों की आर्थिक स्वायत्तता को भी प्रभावित किया। इसलिए औपनिवेशिक हस्तक्षेप को केवल तकनीकी आधुनिकीकरण के रूप में नहीं, बल्कि उत्पादन, बाजार और आर्थिक शक्ति-संबंधों के पुनर्गठन के रूप में समझना अधिक उचित है।

भागलपुर के रेशम उद्योग की निरंतरता में स्थानीय बुनकरों की अनुकूलन क्षमता और उत्पाद की विशिष्टता महत्वपूर्ण रही। पारंपरिक बुनकरों के पास रेशम की गुणवत्ता, धागे की तैयारी, रंगाई, बुनाई और डिजाइन से संबंधित पीढ़ीगत ज्ञान था, जिसने बदलती परिस्थितियों में उन्हें उत्पादन जारी रखने की क्षमता प्रदान की। तसर रेशम की विशिष्ट बनावट, प्राकृतिक चमक और पारंपरिक बुनाई शैली ने भागलपुर के रेशमी वस्त्रों को सामान्य मशीन-निर्मित वस्त्रों से अलग बाजार पहचान दी। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में भी औद्योगिक सर्वेक्षणों में भागलपुर क्षेत्र में लगभग 1,500–2,000 बुनकर परिवारों तथा विभिन्न प्रकार के रेशमी वस्त्रों के उत्पादन का उल्लेख मिलता है (Government of India, n.d.)। इससे स्पष्ट होता है कि उद्योग में संकुचन और पुनर्गठन के बावजूद रेशम बुनाई पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। हालांकि उद्योग का अस्तित्व बुनकरों की आर्थिक समृद्धि का प्रमाण नहीं है; छोटे एवं स्वतंत्र बुनकर आर्थिक दबावों के प्रति अधिक संवेदनशील रहे होंगे। इसी प्रकार पारिवारिक श्रम, महिलाओं की भागीदारी, वैकल्पिक रोजगार की तलाश और बाजार की मांग के अनुसार वस्त्रों में परिवर्तन जैसी प्रक्रियाएँ बुनकर समुदाय के सामाजिक अनुकूलन का हिस्सा रही होंगी। इस प्रकार स्थानीय कौशल और पारिवारिक उत्पादन संरचना ने औपनिवेशिक आर्थिक दबावों के बीच उद्योग की निरंतरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

औपनिवेशिक नीति को उद्योग में हुए सभी परिवर्तनों का एकमात्र कारण मानना उचित नहीं होगा; तकनीकी परिवर्तन, अंतरराष्ट्रीय बाजार, पूंजी, उत्पादन लागत, संगठन, रोजगार और स्थानीय बुनकरों की प्रतिक्रिया भी महत्वपूर्ण कारक थे। इसलिए भागलपुर के रेशम उद्योग को "औपनिवेशिक शोषण के कारण समाप्त हुआ उद्योग" कहना अत्यधिक सरलीकृत निष्कर्ष होगा। अधिक उपयुक्त व्याख्या यह है कि औपनिवेशिक शासन ने पारंपरिक उत्पादन एवं बाजार संरचना को पुनर्गठित किया, जिससे बुनकरों की आर्थिक स्वायत्तता और पेशागत संरचना पर दबाव पड़ा, लेकिन स्थानीय कौशल, तसर रेशम की विशिष्टता, पारिवारिक श्रम और बाजार-अनुकूलन ने उद्योग को जीवित बनाए रखा।

8. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भागलपुर के रेशम बुनकर समुदाय का औपनिवेशिक इतिहास केवल उद्योग के पतन का इतिहास नहीं, बल्कि आर्थिक पुनर्संरचना, सामाजिक परिवर्तन, दबाव, अनुकूलन और निरंतरता की प्रक्रिया था। ब्रिटिश शासन से पूर्व से विद्यमान रेशम बुनाई परंपरा को 1765 के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी के व्यापारिक हस्तक्षेप, तकनीकी नियंत्रण और विस्तारित बाजार व्यवस्था ने प्रभावित किया (Hutková, 2019)। उत्पादन लागत, कच्चे माल की उपलब्धता, मूल्य-निर्धारण, मध्यस्थों तथा यूरोपीय मशीन-निर्मित वस्त्रों की प्रतिस्पर्धा ने बुनकरों की आर्थिक

स्वायत्तता को प्रभावित किया। साथ ही, परिवार-आधारित उत्पादन व्यवस्था के कारण इन परिवर्तनों का प्रभाव पारिवारिक आय, श्रम-विभाजन, महिलाओं की भूमिका और पारंपरिक पेशागत पहचान पर भी पड़ा। हालांकि, Ray (2005) के अनुसार बंगाल के रेशम उद्योग का अवनयन एक क्रमिक एवं बहु-कारकीय प्रक्रिया थी, इसलिए भागलपुर के उद्योग में हुए परिवर्तनों को केवल औपनिवेशिक शोषण के परिणाम के रूप में देखना पर्याप्त नहीं होगा। इसके बावजूद भागलपुर का रेशम उद्योग औपनिवेशिक काल में पूर्णतः समाप्त नहीं हुआ, बल्कि बदलती परिस्थितियों के अनुरूप पुनर्गठित और अनुकूलित हुआ। स्थानीय बुनकरों ने पारंपरिक कौशल, पारिवारिक श्रम, विशिष्ट डिजाइन और तसर रेशम की विशेषता के माध्यम से अपनी उत्पादन परंपरा को बनाए रखा। उपलब्ध ऐतिहासिक एवं औद्योगिक विवरणों में रेशम बुनाई की निरंतरता इस बात का संकेत देती है कि उद्योग ने संकुचन और पुनर्संरचना का सामना किया, न कि पूर्ण विनाश का। अतः भागलपुर के रेशम उद्योग की औपनिवेशिक यात्रा को "दबाव → पुनर्संरचना → अनुकूलन → निरंतरता" की प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। स्थानीय कौशल, सांस्कृतिक पहचान और बुनकर समुदाय की अनुकूलनशीलता ने रेशम परंपरा को बनाए रखा और यही निरंतरता आज की भागलपुर रेशम पहचान की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक आधारभूमि है।

संदर्भ सूची

- Buchanan-Hamilton, F. (1833). An account of the districts of Bhagalpur and Shahabad. [Colonial survey material].
- Buchanan-Hamilton, F. (1833). An account of the districts of Bhagalpur, Gorakhpur, and Benares.
- Chandra Silk. (n.d.). The loom: Traditional handloom weaving practices of Bhagalpur.
- District Administration, Bhagalpur. (n.d.). One district one product: Bhagalpur silk. Government of Bihar.
- Gahlot, M., Sinha, R., & Tuteja, S. (2006). Silk weaving units of Bhagalpur: A study.
- Government of India. (n.d.). Report on an inquiry into the silk industry in India.
- Hutková, K. (2019a). Empire, the English East India Company, and Bengal raw silk. In The English East India Company's silk enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, empire and business (pp. 41–66). Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019b). The English East India Company's silk enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, empire and business. Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019c). The Bengal silk industry and the English East India Company. In The English East India Company's silk enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, empire and business (pp. 91–118). Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019d). The Bengal silk industry and British laissez-faire policies. In The English East India Company's silk enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, empire and business (pp. 145–172). Boydell & Brewer.
- Ministry of Textiles, Government of India. (2014, July 25). Rejuvenation of silk industry of Bhagalpur. Press Information Bureau.
- Mishra, S. N. (1994). Silk industry of Bhagalpur. [Publication details to be verified from the original source].
- Ray, I. (2005). The silk industry in Bengal during colonial rule: The 'de-industrialisation' thesis revisited. Indian Economic & Social History Review, 42(3), 339–375.
- Directorate of Handloom & Sericulture, Government of Bihar — बिहार के हथकरघा और रेशम उद्योग की जानकारी।
- Central Silk Board — Bhagalpur, Bihar — रेशम उत्पादन, सेरीकल्चर और तकनीकी जानकारी।

- District Administration, Bhagalpur — Economy — भागलपुर की अर्थव्यवस्था, तसर रेशम और भागलपुरी साड़ियों की जानकारी।
- भारत सरकार, राज्यसभा — Funds for Sericulture in Bihar (2023) — बिहार के रेशम उत्पादकों और भागलपुर, बांका एवं मुजफ्फरपुर में सेरीकल्चर सहायता पर आधिकारिक संसदीय उत्तर।
- Bihar Economic Survey 2024–25 — बिहार की अर्थव्यवस्था, कृषि और उद्यम क्षेत्र के लिए।
- 6. Brief Industrial Profile of Bhagalpur District — MSME विभाग की औद्योगिक प्रोफाइल, भागलपुर के लघु उद्योगों और औद्योगिक गतिविधियों के अध्ययन के लिए।
- Ministry of Textiles, Government of India — Rejuvenation of Silk Industry of Bhagalpur (2014) — भागलपुर के रेशम उद्योग से संबंधित सरकारी घोषणा।

References

- Buchanan-Hamilton, F. (1833). An Account of the Districts of Bhagalpur and Shahabad. [Colonial survey material].
- Buchanan-Hamilton, F. (1833). An Account of the Districts of Bhagalpur, Gorakhpur, and Benares.
- Chandra Silk. (n.d.). The Loom: Traditional Handloom Weaving Practices of Bhagalpur.
- District Administration, Bhagalpur. (n.d.). One District One Product: Bhagalpur Silk. Government of Bihar.
- Gahlot, M., Sinha, R., & Tuteja, S. (2006). Silk Weaving Units of Bhagalpur: A Study.
- Government of India. (n.d.). Report on an Inquiry into the Silk Industry in India.
- Hutková, K. (2019a). Empire, the English East India Company, and Bengal raw silk. In The English East India Company's Silk Enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, Empire and Business (pp. 41–66). Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019b). The English East India Company's Silk Enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, Empire and Business. Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019c). The Bengal silk industry and the English East India Company. In The English East India Company's Silk Enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, Empire and Business (pp. 91–118). Boydell & Brewer.
- Hutková, K. (2019d). The Bengal silk industry and British laissez-faire policies. In The English East India Company's Silk Enterprise in Bengal, 1750–1850: Economy, Empire and Business (pp. 145–172). Boydell & Brewer.
- Ministry of Textiles, Government of India. (2014, July 25). Rejuvenation of Silk Industry of Bhagalpur. Press Information Bureau.
- Mishra, S. N. (1994). Silk Industry of Bhagalpur. [Publication details to be verified from the original source].
- Ray, I. (2005). The silk industry in Bengal during colonial rule: The ‘de-industrialisation’ thesis revisited. Indian Economic & Social History Review, 42(3), 339–375.
- Directorate of Handloom & Sericulture, Government of Bihar. (n.d.). Information on Handloom and Silk Industry in Bihar.

- Central Silk Board. (n.d.). Bhagalpur, Bihar: Silk Production, Sericulture, and Technical Information.
- District Administration, Bhagalpur. (n.d.). Economy: Bhagalpur's Economy, Tussar Silk, and Bhagalpuri Sarees.
- Government of India, Rajya Sabha. (2023). Funds for Sericulture in Bihar: Official Parliamentary Reply on Sericulture Assistance to Silk Producers in Bihar, Including Bhagalpur, Banka, and Muzaffarpur.
- Government of Bihar. (2025). Bihar Economic Survey 2024–25.
- Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises (MSME), Government of India. (n.d.). Brief Industrial Profile of Bhagalpur District.
- Ministry of Textiles, Government of India. (2014). Rejuvenation of Silk Industry of Bhagalpur. Government of India.